पश्चिमी घाट को बचाना | एक याद

उमाशंकर पेरिओडी

तटीय कर्नाटक के सबसे ताक़तवर अभियानों में से एक था — 1985 का 'पश्चिमी घाट बचाओ जत्था'। साल 1984 से पहले पश्चिमी घाट की दुर्दशा पर कई रपटें अख़बारों में प्रकाशित होने के साथ, इसे बचाने के लिए काफ़ी हो-हल्ला और चर्चाएँ हुईं। एक जैसी सोच रखने वाले हममें से कुछ लोग इस खेदजनक स्थिति पर चर्चा करने के लिए इकट्ठा हुए। हमने महसूस किया कि आपदा पर ध्यान दिलाना तो आसान है लेकिन स्थिति से निपटने के लिए ठोस कार्रवाइयों का सुझाव देना मुश्किल लेकिन ज़्यादा रचनात्मक काम होगा।

हमारा निष्कर्ष था कि हमें पश्चिमी घाट के बारे में जागरूकता पैदा करनी होगी और हम यहाँ की जैव विविधता को बचाने के लिए क्या-क्या कर सकते हैं उसके बारे में इस क्षेत्र के लोगों को सक्षम बनाना होगा। हमने तय किया कि हमें लोगों को इस समृद्ध पारिस्थितिकी तंत्र की पारिस्थितिकी और इसके अस्तित्व के लिए जैव विविधता की ज़रूरत और उसके महत्त्व के बारे में ज़रूरी जानकारी देनी होगी। यह सुझाव देना तो और भी ज़रूरी था कि इस क्षेत्र की ख़त्म हो रही जैव विविधता को बचाने के लिए हर कोई छोटे क़दम उठा सकता है।

योजना

हमारी योजना बिल्कुल सीधी-सरल थी — हम सम्पाजे में एक जत्था शुरू करेंगे और मंगलूरु से होते हुए कुण्डापुर जाएँगे। हम लोगों से समूहों में मिलते, उनसे बात करते, उन्हें समझाते और आगे बढ़ते। हमारे इस काम का एक बड़ा हिस्सा था सड़कों पर लोगों से बिना किसी योजना के सहज रूप से मिलना, जहाँ भी वे इकट्ठा हो रहे थे। हमने शिक्षकों, ग्राम पंचायत सदस्यों, समुदाय आधारित संगठनों, नेताओं और राय निर्माताओं, युवा संघों, स्कूली बच्चों और स्वयं सहायता समूहों के साथ बैठकें आयोजित कीं।

लोगों तक पहुँचने और उन्हें राज़ी करने के लिए हमने नुक्कड़ नाटकों, कठपुतली शो और गानों की योजना बनाई। शशिधर अदापा ने आठ फ़ुट ऊँची, बहुत ही रंग-बिरंगी और रचनात्मक कठपुतलियाँ डिज़ाइन कीं। शशि ने कठपुतलियों का एक समूह बनाया ताकि हम अलग-अलग पात्रों को लेकर कहानियाँ बना सकें।

हमने कई तरह के कठपुतली शो बनाने के लिए एक महीने तक योजना बनाई और उस पर काम किया। सबसे प्रभावशाली शो एक छोटा-सा शो था, जिसमें बहुत स्पष्ट रूप से दिखाया गया था कि जैव विविधता क्यों महत्त्वपूर्ण है और अगर यह ख़त्म हो गई तो किस तरह पूरी दुनिया भी ख़त्म हो सकती है। यह इस सन्देश के साथ समाप्त हुआ — "जैव विविधता को बचाओ, जंगलों को बचाओ और ज़्यादा पेड़ लगाओ।" इस दुनिया में प्लास्टिक ने जो विनाश किया है, इसे लेकर भी एक शो हुआ कि कैसे प्लास्टिक हज़ारों सालों तक ख़राब नहीं होता और पानी को मिट्टी में रिसने से रोक देता है तथा भूजल की पुनःपूर्ति में भी रुकावट डालता है। इस बात पर ज़ोर दिया गया कि प्लास्टिक का इस्तेमाल किसी भी रूप में न किया जाए और जब कोई और विकल्प न हो तो इसे री-साइकल करके पुन: उपयोग किया जाए। हमने कई बार गाँवों में लोगों को यह सोचकर प्लास्टिक जलाते देखा था कि यह सबसे अच्छा उपाय है। कठपुतलियों के ज़रिए बहुत स्पष्टता से और ज़ोर देकर यह सन्देश दिया गया कि प्लास्टिक जलाने से वातावरण प्रदूषित होता है और हमें इससे नुक़सान पहुँचता है।

हमने एक कहानी जलचक्र को लेकर भी बनाई जिसमें बताया गया कि कैसे समुद्री जल का तापमान बढ़ने से पानी वाले बादल बनते हैं और इस तरह बनने वाले बादल कैसे ज़मीन की यात्रा करते हैं और किस तरह उन्हें पेड़/ जंगल रोक लेते हैं ताकि हमें बारिश से पानी मिल सके। हमने बारिश के बारे में भी बात की और इस पर भी कि बारिश का पानी कैसे इकट्ठा होता है और किस तरह नदियों-नालों के ज़रिए समुद्र में जाता है। यहाँ हम जलचक्र में वनों के महत्त्व पर ज़ोर दे रहे थे।

हमने एक और कहानी बनाई जो ग्रहणों के बारे में थी। हमने गेंदों और टॉर्च की रोशनी से दिखाया कि ग्रहण कैसे होते हैं। इसे एक कहानी के माध्यम से समझाया गया था जिसके पात्र थे, कुछ बच्चे और उनकी दादी। इन कहानियों के अलावा, हमने जल संचयन, पानी के सर्वोत्तम उपयोग और अन्य प्राकृतिक संसाधनों के बारे में भी बात की।

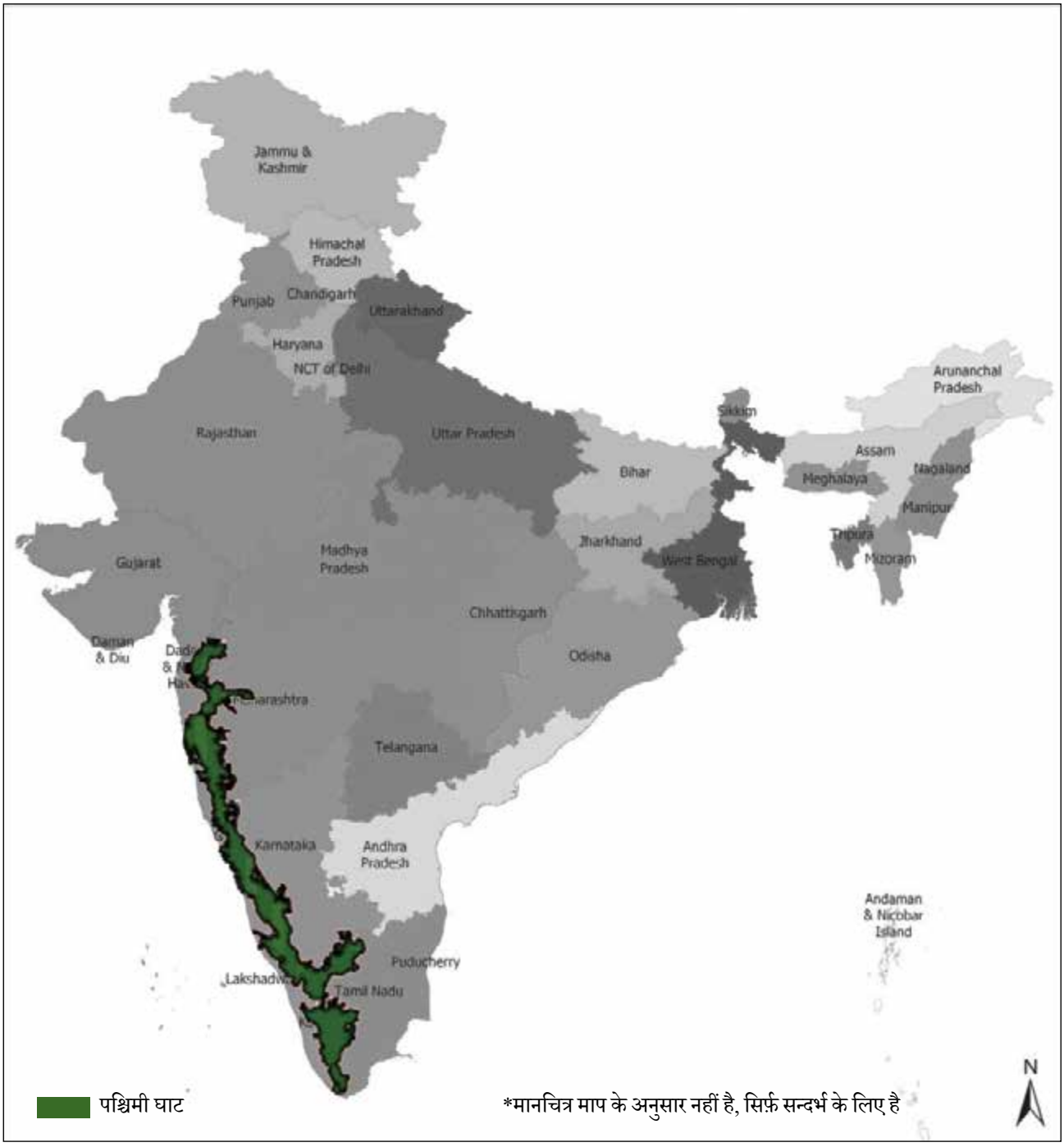

पश्चिमी घाट तमिलनाडु से महाराष्ट्र तक भारतीय प्रायद्वीप के पश्चिमी तट के साथ चलने वाली एक पर्वत शृंखला है जो केरल, कर्नाटक और गोवा से होकर गुज़रती है। यह क्षेत्र अपनी प्राकृतिक सुन्दरता के लिए प्रसिद्ध है और दुनिया के शीर्ष आठ जैव विविधता वाले हॉटस्पॉट में से एक है। यह दुनिया भर में संकटग्रस्त 300 से ज़्यादा वनस्पतियों, जीवों, पक्षियों, उभयचरों, सरीसृपों और मछलियों की प्रजातियों का आवास है।

कुछ ख़ास यादें

हमारा पाँचवाँ शो सम्पाजे के पास एक छोटी-सी पंचायत में था। इस शो का आयोजन पंचायत सदस्यों द्वारा किया गया था जो ग्रामीण समुदाय के साथ इकट्ठा हुए थे। एक संक्षिप्त परिचय हुआ, फिर कुछ स्थानीय नेताओं ने वक्तव्य दिए जिसके बाद हमने पारिस्थितिकी तंत्र और समाज पर प्लास्टिक के हानिकारक प्रभावों को लेकर अपना कठपुतली शो प्रस्तुत किया। कठपुतली शो के माध्यम से इस बात को विस्तार से समझाया गया कि ज़मीन पर बहुत ज़्यादा प्लास्टिक हो जाने से क्या होता है; जब क्षरण नहीं होता, तो पानी अन्दर नहीं रिस पाता; मिट्टी की चयापचयी क्रिया रुक जाती है और उपजाऊ भूमि में भी कुछ नहीं उगता।

ज़मीन पूरी तरह से बेकार हो जाती है। शो के तुरन्त बाद बहुत-से सवाल किए गए, जिनका हमने जवाब दिया। लोगों ने तय किया कि प्लास्टिक इकट्ठा करेंगे और भविष्य में इसका इस्तेमाल नहीं करेंगे। मुझे 15 साल बाद इस गाँव का दौरा करने का मौक़ा मिला और मैंने देखा कि वहाँ की पंचायत आज भी प्लास्टिक मुक्त बनी हुई है। वे प्लास्टिक को बहुत कुशलता से सम्भालते हैं। ये लोग प्लास्टिक के ख़तरे से अवगत हैं और प्लास्टिक का इस्तेमाल नहीं करते। गाँव में जो भी प्लास्टिक आता है उसे एक जगह पटक दिया जाता है जहाँ से उसे पंचायत द्वारा इकट्ठा करके व्यवस्थित तरीक़े से उसका निपटारा कर दिया जाता है।

एक और स्मृति एक छोटे-से स्कूल की है, जिसे बंजर ज़मीन पर बनाया गया है जैसा कि सामान्यतः नहीं होता। आमतौर पर तटीय क्षेत्र में स्कूल के आस-पास काफ़ी हरियाली होती है। इस स्कूल में परिसर की कोई दीवार नहीं थी और परिसर अस्तव्यस्त भी था, न ही उसमें कोई पेड़-पौधे लगे थे। हमने दो शो किए, पहला जलचक्र पर था और दूसरा पेड़ों के महत्त्व पर। बच्चे बहुत होशियार थे। उन्होंने बहुत-से सवाल पूछे। यह एक छोटी-सी बस्ती थी जिसे '5-सेंट हाउसेस' के नाम से जाना जाता था। यह भूमि ग़रीब भूमिहीन लोगों को घर बनाने के लिए दी जाती है जो आमतौर पर गाँव के केन्द्र से दूर होती है और बंजर होती है। हमारा सोचना था कि इन सीमित संसाधनों में भी क्या हम स्कूल को हरा-भरा बनाने के लिए कुछ कर सकते हैं? शिक्षक भी शामिल हुए और स्कूल को हरा-भरा बनाने का फ़ैसला किया। अब तक बस्ती के लोग भी साथ आ गए थे और उन्होंने कहा कि वे स्कूल और बस्ती को हरा-भरा बना देंगे। इससे वहाँ के निवासी पौधे लाने के लिए कहीं भी जाने को प्रेरित हुए। उन्हें पास की नर्सरी से मुफ़्त में पौधे मिल गए और उन्होंने इन पौधों को लगाना शुरू कर दिया। आज इस स्कूल का एक सुन्दर परिसर है जिसमें चारों तरफ़ बड़े और मज़बूत पेड़ लगे हैं। अच्छी चीज़ यह हुई कि यह काम सिर्फ़ स्कूल तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि अब पूरी बस्ती ख़ूब हरी-भरी हो गई है।

बन्तवाल के पास एक स्कूल में हमने ग्रहण पर आधारित नाटक किया। यह नाटक ख़ासतौर पर चुनौतीपूर्ण था क्योंकि यहाँ पृष्ठभूमि में प्रकाश और छाया की ज़रूरत थी और इसे करने के लिए हमें पूरी तरह अँधेरा चाहिए था। स्कूल काफ़ी बड़ा और क़स्बाई था। स्कूल के विज्ञान शिक्षक ने नाटक को प्रस्तुत करने में हमारी बहुत मदद की। अब तक हमें काफ़ी अभ्यास हो गया था और नाटक बहुत बढ़िया रहा। बच्चों ने कई सवाल किए और काफ़ी गहन चर्चा हुई। विद्यार्थियों द्वारा हर तरह की बातें बताई गईं। जैसे ग्रहण के दौरान बाहर निकला एक व्यक्ति मृत पाया गया था, कई महिलाओं का गर्भपात हो गया था। हमने सबूतों के साथ बात की। हमने पूछा कि क्या ये सब घटनाएँ उन्होंने ख़ुद देखी थीं या केवल उनके बारे में सुना है। हमने इस तथ्य को दोहराया कि हमें और ज़्यादा वैज्ञानिक ढंग से सोचने और सबूतों और तथ्यों के आधार पर अपनी राय बनाने की ज़रूरत है। हमें केवल उस बात पर यक़ीन करना चाहिए जिसे साबित किया जा सके। हमने महसूस किया कि यह चर्चा बहुत लाभदायक रही।

ये हमारे उन प्रदर्शनों के कुछ उदाहरण हैं जो हमने सार्वजनिक रूप से तथा स्कूलों में किए। कई जगहों पर लोगों ने पर्यावरण संरक्षण की शपथ ली और कई जगहों पर उन्होंने तुरन्त ही आस-पास की सफ़ाई करना, पौधे रोपना और प्लास्टिक उठाना शुरू कर दिया। हमारे हिसाब से सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा थीं चर्चाएँ — लोगों के प्रश्न और हमारा उनकी शंकाओं को दूर कर पाना। जत्था 15 दिनों तक चला। एक समूह के रूप में, हम एक गाँव से दूसरे गाँव में बात करने, चर्चा करने और बदलाव के लिए निर्णय लेने के लिए जाते रहे। हर जगह लोगों ने बाँहें फैलाकर हमारा स्वागत किया, हमें खाने के लिए भोजन और रहने के लिए जगह दी। हम स्कूलों और पंचायत कार्यालयों में रहते। कभी-कभी हम लोगों के घरों में भी रहे।

लेकिन यह हमेशा आसान नहीं होता था। कुछ जगहों पर हमें विरोध का सामना भी करना पड़ा। उदाहरण के लिए, दक्षिण कनारा के सबसे प्रसिद्ध मन्दिरों में से एक में हमें नाटक करने की अनुमति नहीं मिली। हम मन्दिर के प्रबन्धन से लड़े पर वे अडिग रहे। अन्त में हमने मन्दिर परिसर के बाहर अपना नाटक किया। हमने उन सभी लोगों को इकट्ठा किया जो मन्दिर में आए थे, एक बड़ा घेरा बनाया और खुले मैदान में अपनी प्रस्तुति दी। यह बहुत ही प्रभावी शो था जिसमें काफ़ी चर्चा की गई और कई लोगों ने शपथ भी ली। प्रदर्शन करने के लिए सबसे मुश्किल जगहें थीं बाज़ार और गलियाँ क्योंकि इन जगहों पर लोग चलते-फिरते रहते हैं और अपना-अपना काम करते रहते हैं। हम उन्हें रोक नहीं पाए, इसलिए हमें अपनी

आवाज़ इतनी तेज़ रखनी पड़ी कि वे हमें देखने के लिए अपना काम रोक दें। प्रदर्शन करने के लिए स्कूल और गाँव सबसे शान्तिपूर्ण स्थान थे।

जत्थे का क्रियान्वयन

इस जत्थे की सफलता की कुंजी थी — योजना और तैयारी। योजना बनाने में हमें छह महीने से ज़्यादा का समय लगा। मार्ग की विस्तृत रूपरेखा तैयार की गई। लोगों से काफ़ी पहले सम्पर्क किया गया था। जत्थे के पहले की जाने वाली चर्चा से हर जगह मदद मिली। हमने जब भी पाया कि कोई ख़ास रास्ता सही नहीं रहेगा तो हमने उसे बदल दिया। कई टीमें एक साथ

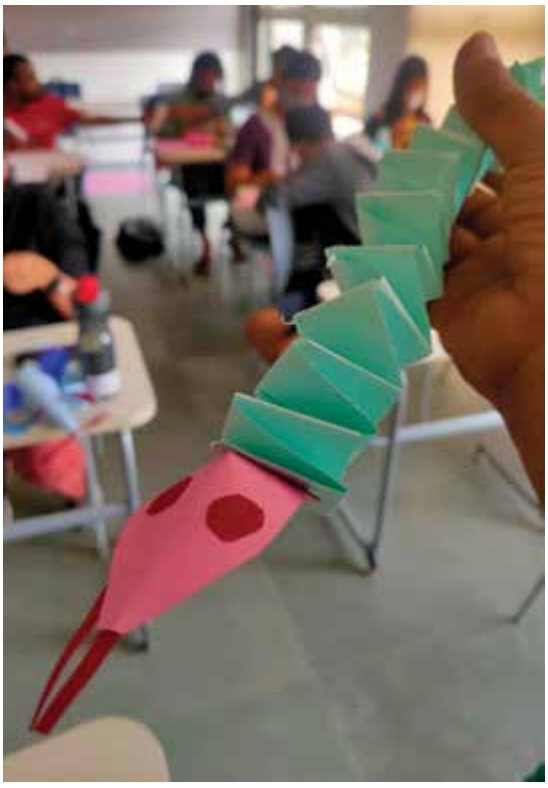

काम कर रही थीं। शोध करने वाली टीम ने जानकारी इकट्ठा करने और उसे प्रतिभागियों के साथ साझा करने के लिए काफ़ी बुनियादी काम किया। प्रदर्शन टीम ने नाटकों का निर्माण किया और प्रस्तुति तैयार की जिसमें नाटक, कठपुतली का तमाशा और गीत शामिल थे। तीन अलग-अलग टीमें अभ्यास करके प्रदर्शन की तैयारी काफ़ी पहले कर लेती थीं। अख़बारों के उस ज़माने में मीडिया कवरेज और प्रचार पाने के लिए प्रचार टीम ने बहुत मेहनत की। लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा था — प्रतिबद्ध लोगों का एक समूह तैयार करना। इस मुख्य समूह में काफ़ी प्रतिबद्ध लोग थे। इस पहल की सफलता के पीछे इसमें शामिल लोगों की प्रतिबद्धता और अलग-अलग समूहों का आपसी तालमेल था। जत्थे का प्रभाव ज़बरदस्त था। इसका असर प्लास्टिक मुक्त पंचायतों, सार्वजनिक स्थानों पर लोगों द्वारा पेड़ लगाने, पर्यावरण कार्यों में लगे युवक संघों के रूप में आज भी देखने को मिलता है। पश्चिमी घाट बचाओ जत्था का प्रभाव बहुत सकारात्मक रहा है।

कठपुतलियों का एक शैक्षणिक उपकरण के रूप में इस्तेमाल। अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु में विद्यार्थी-शिक्षकों के साथ उमाशंकर पेरिओडी की कठपुतली कार्यशाला।

Endnotes

i Jatha: an organized event in which a group of people walk through the streets together to celebrate something, spread a message or protest against something.

ii Shashidhar Adapa is a renowned Indian production, set and puppet designer.

उमाशंकर पेरिओडी अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के कर्नाटक राज्य के प्रमुख हैं। उन्हें विकास के क्षेत्र में 30 से ज़्यादा वर्षों का अनुभव है। उन्होंने राष्ट्रीय साक्षरता अभियान के साथ-साथ बीआर हिल्स, कर्नाटक में आदिवासी शिक्षा में व्यापक योगदान दिया है। वे ज़मीनी स्तर के फ़ील्ड कार्यकर्ताओं और प्राइमरी स्कूल के शिक्षकों को प्रशिक्षण देते रहे हैं जिसे वे 'बेयरफ़ुट रिसर्च' (नंगे पैर शोध) कहते हैं। वे कर्नाटक स्टेट ट्रेनर्स कलेक्टिव के संस्थापक सदस्य भी हैं। उनसे periodi@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : अमेय कान्त **पुनरीक्षण :** भरत त्रिपाठी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय